चार्जशीट दाखिल हो सकी और न ही विजिलेंस अपनी जांच पूरी कर पाई।

उधर, मायावती से गठबंधन की संभावनाएं तलाश रहे अखिलेश ने 2014 के लोकसभा चुनाव में हार के बाद मुलायम सिंह यादव को हाशिये पर और शिवपाल को भी किनारे लगा दिया था। हो सकता है इसके पीछे की वजह अखिलेश को इस बात का अहसास होना होगा कि मुलायम और शिवपाल के रहते बसपा से गठबंधन संभव नहीं है। यहां तक तो सब ठीक चलता रहा, लेकिन तभी एक जनहित याचिका हाईकोर्ट में दाखिल हो गई। याचिकाकर्ता भावेश पांडेय ने मायावती राज में हुए भ्रष्टाचार की जांच सलीके से नहीं कराए जाने के लिए अखिलेश सरकार की नीयत पर सवाल खड़ा करते हुए आरोप लगाया था कि विजिलेंस द्वारा राजनीतिक दबाव में जांच को लटकाया जा रहा है। इसीलिये जनहित याचिकाकर्ता द्वारा लोकायुक्त की सिफारिश के तहत पूरा मामला सीबीआई को हस्तांतरित किये जाने की अपील की गई। अर्जी में यह भी कहा गया है कि मामले में चूंकि तमाम हाई प्रोफाइल लोग आरोपी हैं, इसलिए इसमें लीपापोती की जा रही है। याचिकाकर्ता ने सीधे तौर पर मायावती का नाम लिए बिना यह आशंका जताई है कि अगर सीबीआई या एसआईटी इस मामले में जांच करती है तो कई और चौंकाने वाले हाई प्रोफाइल लोगों की मिलीभगत भी सामने आ सकती है। अदालत ने इस मामले में सख्त रवैया अपनाते हुए विजिलेंस जांच की स्टेटस रिपोर्ट एक हफ्ते में तलब कर ली और टिप्पणी की कि अरबों के घोटाले का कोई भी दोषी कतई बचना नहीं चाहिए, भले ही वह कितना भी रसूखदार क्यों न हो।

अखिलेश के दाग भी हैं गहरे

मायावती के शासनकाल के भ्रष्टाचार पर पर्दा डालने का काम करके अखिलेश यादव ने प्रदेश की जनता के साथ विश्वासघात किया था। अखिलेश ने मायावती के भ्रष्टाचार की जांच में ही रोड़ा नहीं अटकाया, बल्कि वह स्वयं भी भ्रष्टाचार के दंगल में फंसते गए। अखिलेश राज में खनन घोटाला, लखनऊ का रिवर फ्रन्ट घोटाला, एक्सप्रेस-वे के लिए भूमि अधिग्रहण में घोटाला और न जाने कौन-कौन से। बीते साल की कैग रिपोर्ट में सनसनीखेज खुलासा हुआ कि अखिलेश सरकार में सरकारी धन की जमकर लूट हुई है। सरकारी योजनाओं के नाम पर फर्जीवाड़ा कर 97 हजार करोड़ रुपए के सरकारी धन का बंदरबांट हुआ। खास बात यह है कि पंचायती राज विभाग, समाज कल्याण विभाग और शिक्षा विभाग में अकेले करीब 26 हजार करोड़ रुपए की लूट-खसोट की गई है। देश की सबसे बड़ी ऑडिट एजेंसी कैग ने 31 मार्च, 2017-18 तक यूपी में खर्च हुए बजट की जांच की के बाद यह बात कही थी।

कैग ने कहा कि उत्तर प्रदेश में खर्च हुए कुल धनराशी के लेखा जोखा अखिलेश सरकार के पास नहीं था। खर्चे का उपयोगिता प्रमाणपत्र उपलब्ध नहीं होने से यूपी में बड़े पैमाने पर धनराशि के दुरुपयोग और खर्च में धोखाधड़ी की आशंका है। रिपोर्ट में कहा गया है कि अखिलेश सरकार के दौरान यूपी में 2014 से 31 मार्च 2017 के बीच हुए करीब ढाई लाख से ज्यादा धन कार्यों के लिए उपयोग किया गया लेकिन इनके उपयोगिता प्रमाणपत्र अखिलेश के पास नहीं हैं। यूपी में धनराशि के उपयोगिता प्रमाणपत्र जमा न करने का मामला कई बार शासन के सामने लाया गया, मगर कोई सुधार नहीं हुआ। मायावती को बचाने वाले अखिलेश पर भी आजकल जांच एजेंसियों का शिकंजा कसा हुआ है। ऐसा लगता है कि भ्रष्टाचार के मामले में बसपा सुप्रीमो मायावती और सपा प्रमुख अखिलेश यादव 'चोर-चोर मौसेरे भाई' जैसे थे।

यह है वो डर जिसके चलते कांग्रेस से दूरी बनाकर चल रहे हैं सपा-बसपा

डर यही था कि कहीं मोदी से लड़ते-लड़ते कांग्रेस का जनाधार उसके पास वापस न लौट जाए। अगर ऐसा होता तो सपा-बसपा के पास हाथ मलने के अलावा कुछ नहीं बचता। इसीलिए मायावती-अखिलेश चुनाव से पूर्व कांग्रेस से दूरी बनाकर चल रहे हैं।

मैं करूं तो रास लीला, तुम करो तो करेक्टर ढीला। यह पंक्ति सपा-बसपा और कांग्रेस की जुगलबंदी पर बिल्कुल फिट बैठती है, जिस तरह से तीनों दलों के बीच नूरा कुश्ती चल रही है, उससे यह साफ है कि चुनाव बाद तीनों दल जरूरत पड़ने (मोदी या बीजेपी को सत्ता से रोकने) पर साथ आने में गुरेज नहीं करेंगे। इस समय सपा-बसपा अपने आप को कांग्रेस से अलग दिखाने का जो नाटक कर रहे हैं उसके पीछे की मूल वजह मायावती-अखिलेश का डर है। दरअसल सपा-बसपा ने कांग्रेस के वोट बैंक में सेंधमारी करके ही उत्तर प्रदेश की सियासत में अपनी हनक-धमक बनाई थी। सपा ने कांग्रेस के मुस्लिम-पिछड़ा और बसपा ने दलित वोट बैंक में सेंधमारी की जिसका परिणाम यह हुआ कि कांग्रेस यूपी में हाशिये पर चली गई। करीब 29 वर्षों से यूपी में कांग्रेस सत्ता से बाहर है। बसपा-सपा के चलते लोकसभा चुनाव में भी कांग्रेस का प्रदर्शन लगातार फीका होता जा रहा है। 2014 के लोकसभा चुनाव में तो कांग्रेस अमेठी-रायबरेली तक ही सिमट कर रह गई थी। वहीं 2017 के विधान सभा चुनाव में समाजवादी साइकिल पर सवार होकर राहुल गांधी ने कांग्रेस की नैया पार लगाने का जो सपना देखा था, वह भी अधूरा ही रह गया था।

उधर, कांग्रेस के रसातल में जाने के बाद सपा-बसपा की चिंता भाजपा और मोदी ने बढ़ा दी। 2014 के लोकसभा और 2017 के यूपी विधान सभा चुनाव में सपा-बसपा का जो हश्र हुआ वह किसी से छिपा नहीं है। मोदी फोबिया ने ही सपा-बसपा जैसे विरोधी दलों को एक मंच पर खड़ा कर दिया, लेकिन मोदी से डरने के बाद भी मायावती-अखिलेश को यह मंजूर नहीं हुआ कि वह कांग्रेस से हाथ मिलाकर मोदी के विजय रथ को रोंके, जबकि कांग्रेस को साथ लेने से इन दलों की जीत और भी बड़ी हो सकती थी। लेकिन डर यही था कि कहीं मोदी से लड़ते-लड़ते कांग्रेस का जनाधार उसके पास वापस न लौट जाए। अगर ऐसा होता तो सपा-बसपा के पास हाथ मलने के अलावा कुछ नहीं बचता। इसीलिए मायावती-अखिलेश चुनाव से पूर्व कांग्रेस से दूरी बनाकर चल रहे हैं ताकि उनके मतदाताओं में कोई भ्रम न रह जाए।

बसपा सुप्रीमो मायावती अपने वोटरों के बीच यह मैसेज भी नहीं जाने देना चाहती हैं कि कांग्रेस उन पर मेहरबानी कर रही है। इसीलिए वह कांग्रेस पर लगातार एक के बाद एक हमले कर रही हैं। कांग्रेस के हर दांव की हवा निकाल रही हैं। कांग्रेस ने गत दिवस बसपा-सपा गठबंधन के सात दिग्गज प्रत्याशियों के खिलाफ पार्टी का कोई भी प्रत्याशी नहीं उतारने की जो घोषणा की थी, उसे मायावती ने ठुकराते हुए कांग्रेस को चुनौती दी है कि वह 80 सीटों पर अपने प्रत्याशी उतारे। गठबंधन प्रत्याशियों की आड़ लेकर किसी तरह का भ्रम न फैलाए। ऐसा लगता है कि मायावती ने तय कर लिया है कि वह कांग्रेस के हर दांव की काट करती रहेंगी। मायावती सियासी बाजार में कांग्रेस और भाजपा को एक ही तराजू पर तौलना चाहती हैं। जबकि कांग्रेस नेत्री प्रियंका गांधी वाड्रा यही बताने और जताने की कोशिश कर रही हैं कि सपा-बसपा भी कांग्रेस की तरह मोदी से लड़ रही हैं और मोदी हटाने के मसले पर वह तीनों एक हैं।

खैर, कांग्रेस के 07 सीटों के ऑफर को ठुकराने वाले मायवती के नए दांव से यह साबित हो गया है कि राजनीति में हर दांव सीधा नहीं पड़ता है। इसकी कलई तब खुलती है, जब विरोधी इसकी काट निकालते हैं जिससे दांव चलने वाला ही इसका 'शिकार' हो जाता है और उसे इसका खामियाजा भुगतना पड़ता है। नेता तो नेता कभी-कभी तो मीडिया भी सियासी दांव की बारीकियों को नहीं समझ पाता है। कुछ दिनों पूर्व की बात है, जब बसपा सुप्रीमो मायावती पर दबाव बनाने के लिए प्रियंका वाड्रा भीम सेना के चीफ चन्द्रशेखर आजाद से मिलने मेरठ पहुंच गई थीं। इस मुलाकात को यह कहते हुए मानवीय रंग दिया गया कि प्रियंका बीमार चन्द्रशेखर का हालचाल पहुंचने गई थी, इस पर राजनीति नहीं होना चाहिए। मगर सब जानते थे कि बीमारी की आड़ में प्रियंका सियासी रोटियां सेंक रही थीं। चन्द्रशेखर कोई बहुत बड़ी बीमारी से ग्रस्त नहीं थे। इस बात का पता सबको था और यह बात तब और पुख्ता हो गई जब प्रियंका से मुलाकात के चंद घंटों बाद चन्द्रशेखर दिल्ली में एक जनसभा के दौरान मोदी सरकार को ललकारते नजर आए। असल में प्रियंका को लगा कि चन्द्रशेखर उनके पाले में आ गए तो पश्चिमी यूपी में बड़ी संख्या में दलितों के वोट कांग्रेस की झोली में पड़ सकते हैं। इस मुलाकात के बहाने प्रियंका बसपा सुप्रीमो मायावती पर भी दबाव बनाना चाहती थीं। दबाव की वजह यही है कि कांग्रेसियों को लगता है कि अगर सपा-बसपा गठबंधन का कांग्रेस हिस्सा नहीं बन पाई है तो इसके लिए मायावती पूरी तौर से जिम्मेदार हैं, जबकि सपा प्रमुख अखिलेश यादव दिल से यही चाहते थे कि कांग्रेस भी गठबंधन का हिस्सा हों, लेकिन मायावती के चलते वह मुंह नहीं खोल पाए थे।

प्रियंका-चन्द्रशेखर की मुलाकात की मीडिया में भी खूब चर्चा हुई। इसे प्रियंका का मास्टर स्ट्रोक बताया गया। इस मुलाकात को लेकर इलेक्ट्रानिक न्यूज चैनलों में दंगल छिड़ गया। हल्ला बोल होने लगा। दूसरे दिन प्रिंट मीडिया में प्रियंका-चन्द्रशेखर मुलाकात पर कोई समाचार/स्टोरी आती इससे पहले ही बसपा सुप्रीमो ने बाजी पलट दी। आनन-फानन में बसपा सुप्रीमो मायावती ने अपने गठबंधन सहयोगी अखिलेश यादव के साथ मीटिंग बुला ली। बसपा की तरफ से संकेत आने शुरू हो गए कि सोनिया-राहुल को गठबंधन वॉक ओवर नहीं देगा। बहन मायावती अमेठी से राहुल गांधी और रायबरेली से सोनिया गांधी के खिलाफ अपना प्रत्याशी उतार सकती हैं। कांग्रेस को बसपा खेमे से आया यह संकेत भूकंप के झटके की तरह लगा। वैसे भी मायावती लगातार कांग्रेस पर हमलावर चल ही रही थीं। अगर मायावती सच में अमेठी और रायबरेली से अपना प्रत्याशी उतार देतीं तो कम से कम से कम अमेठी की सीट तो फंस ही सकती थी। यहां से बीजेपी स्मृति ईरानी पर दांव लगा रही है, जिन्होंने पिछले लोकसभा चुनाव में राहुल को जीत के लिए दिन में तारे दिखा दिए थे। गांधी परिवार पर किसी तरह का संकट आ जाए तो पूरी कांग्रेस अपना आपा खो देती है क्योंकि यह वही पार्टी है जिसमें कभी इंडिया इज इंदिरा, इंदिरा इज इंडिया का नारा गूंजा करता था। यह परिवार अपने आप को देश से भी बड़ा समझता है, लेकिन लाख टके का सवाल यही है कि अगर मायावती और अखिलेश नहीं चाहते हैं कि कांग्रेस उनके प्रमुख नेताओं के खिलाफ 07 सीटों पर अपना प्रत्याशी न उतार कर उन्हें कोई गिफ्ट नहीं दे तो फिर सपा-बसपा को भी कांग्रेस को गिफ्ट में अमेठी और रायबेरली छोड़ देने की बात नहीं करनी चाहिए, इससे भी तो मतदाताओं में गलत मैसेज ही जाता है। चुनाव लड़कर ज्यादा हासिल कर सकती है कांग्रेस

बहरहाल, प्रियंका के भीम आर्मी चीफ चन्द्रशेखर से मुलाकात से नाराज मायावती के मास्टर स्ट्रोक ने कांग्रेस को उग्र करने की बजाए बैकफुट पर ढकेल दिया। उसने चुप्पी साध ली। बात यहीं नहीं रूकी। गत दिवस उत्तर प्रदेश कांग्रेस ने मायावती के गुस्से की आग पर पानी डालने के लिए सपा-बसपा-रालोद गठबंधन के लिए सात सीटें छोड़ने का ऐलान कर दिया। लखनऊ में उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष राज बब्बर ने एक प्रेस कॉन्फ्रेंस में बताया था कि कांग्रेस उत्तर प्रदेश में सपा-बसपा-रालोद गठबंधन के लिए सात सीटों पर अपने उम्मीदवार नहीं उतारेगी। इन सीटों में मैनपुरी, कन्नौज, आजमगढ़ के साथ फिरोजाबाद, मुजफ्फरनगर व मथुरा की सीट शामिल हैं। इसके अलावा कांग्रेस उन सीटों पर अपने प्रत्याशी नहीं उतारेगी जहां से मायावती, आरएलडी के अजित सिंह और जयंत चौधरी चुनाव लड़ेंगे। कांग्रेस को गठबंधन पर %उपकार% दिखाए 24 घंटे भी नहीं हुए थे और मायावती एक बार फिर कांग्रेस पर हमलावर हो गईं। उन्होंने साफ कर दिया कि कांग्रेस जबरदस्ती यूपी में गठबंधन के लिए सात सीट छोड़ने की भ्रान्ति न फैलाए। कांग्रेस उत्तर प्रदेश में भी पूरी तरह से स्वतंत्र है कि वह यहां की सभी 80 सीटों पर अपने उम्मीदवार खड़ा करके अकेले चुनाव लड़ें। हमारा गठबंधन उत्तर प्रदेश में भाजपा को अकेले हराने के लिए पूरी तरह से सक्षम है।